उपासना

ब्रह्मदृष्टिरुत्कर्षात् ।

अर्थात् प्रतीक में ब्रह्मदृष्टि हो, ब्रह्म में प्रतीक भावना मत करो । अहंग्रह उपासना के सम्बन्ध में यूं लिखा है ।

आत्मेति तूपगच्छन्ति ग्राहयन्ति च ॥
ब्रह्ममीमांसा 4.1.3

अर्थात् ब्रह्म को अपना आत्मा (अपना आप) बारम्बार चिन्तन करो वेद का यही मत है और यही उपदेश । इन दोनों प्रकार की उपासना में अभिप्राय और लक्ष्य एक ही है, वह क्या है ?

सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानीति शान्त उपासीत ।

ठंडी छाती से अन्दर बाहर ब्रह्म ही ब्रह्म देखो ।

अथ खलु क्रतुमयः पुरुषः ॥

जैसा भी पुरुष का विचार और चिन्तन रहता है वैसा ही वोह अवश्य हो जाता है तो ब्रह्मचिन्तन ही क्यों न दृढ़ किया जाय । अर्थात् अपने आप को ब्रह्मरूप ही क्यों न देखते रहें । इसी पर श्रुति का वचन है ।

"ब्रह्मवित् ब्रह्मैव भवति"

अहंग्रह और प्रतीक उपासना दोनों में नाम रूप संसार (बुत) को मिटाना इष्ट होता है बनाना नहीं । जल ब्रह्म है, स्थल ब्रह्म है, पवन ब्रह्म है, आकाश ब्रह्म है, गंगा ब्रह्म है इत्यादि प्रतीक उपासना का रूपदर्शक वाक्यों में जल, पवन, आकाश आदि के साथ ब्रह्म को कहीं जोड़ना नहीं है जैसे यह सर्प काला है । इस में सर्प भी रहे है और काला भी । किन्तु यहां तो बाध समानाधिकरण है, जैसे किसी भ्रान्ति वाले को कहें यह सर्प रस्सी है, यहां रस्सी काले रंग की तरह सर्प के साथ समान सत्ता वाली नहीं है । किन्तु रस्सी ही है सर्प नहीं, इसी तरह सच्ची उपासना वह है कि धारा रूप जल दृष्टि में न रहे ब्रह्मचित में समा जाये, स्पन्द रूप पवन दृष्टि से गिर जाये । ब्रह्मसत्ता मात्र भान हो । प्रतिमापन उड़ जाय । चैतन्यस्वरूप भगवान की झांकी हो जैसे किसी प्रेम के मतवाले घायल ने प्यारे का प्रेम पत्र पढ़ा उस की दृष्टि तो प्यारे के स्वरूप से भर गई अब पत्र किस को दीख पड़े । गोपियां उद्धव को कहती हैं; यह पाती अब कहां रक्खें, छाती से लगाती हैं तो जल जायगी आंखों पर धरती हैं तो गल जायगी । उपासना में मगन होने के लिये इन्द्रिय ज्ञान तो एक छेड़ जैसी रह जायगी । प्यारे ने चुटकी भरी चुटकी वस्तुः (वस्तुतः) कोई चीज नहीं है प्यारा ही वस्तु रूप है । इसी तरह सब इन्द्रियों का ज्ञान एक ही एक प्यारे की छेड़छाड़ रूप प्रतीत हो "आई

ठुमक ठुमक लाई बुलावा श्याम का'' भाई उपासना तो इसी का नाम है जिस में जुबान ने तो क्यों हिलना है शरीर की हड्डी और नाड़ी तक के परमाणु परमाणु हिल जायें । ये नहीं तो आंख मून्दो नाक मून्दो, कान मून्दो, मुख मून्दो गावो चाहे चिल्लावो तुम्हारी उपासना बस एक चित्र रूप है जिस में जान नहीं बड़ा सुन्दर चित्र सही रवि वर्मा का मान लो, पर खाली तस्वीर से क्या है । पदार्थों में इस ब्रह्म दृष्टि को दृढ़ करना और विषय भावना का मिटाना रूपी उपासना, कुछ वैसा अध्यारोप कल्पना शक्ति को बढ़ना (बढ़ाना) और बर्त्तना न जान लेना जैसा शतरंज में काठ के टुकड़ों को बादशाह, वजीर हाथी, घोड़ा, प्यादा मान लेते हैं ।

जल ब्रह्म है, आकाश ब्रह्म है, प्राण ब्रह्म है, अग्नि ब्रह्म है, मन ब्रह्म है, इत्यादि उपासना के रूप तो अवस्तु को मिटाकर वस्तु भावना जमाते हैं यदि यह खाली मान लेना, और (कल्पना) फल्पना मात्र भी हो तो वैसी कल्पना है जैसे बालक गुरु जी के कहने से गुणा करने और भाग देने की रीति को मान लेता है भाग देने गुणा करने की वह विधि क्यों ऐसी है और क्यों नहीं इस रीति द्वारा उत्तर के ठीक आजाने में कारण क्या है । यह बातें तो पीछे आएंगी जब बीज गणित एलजबरा पढ़ेगा परन्तु उस गुरु की रीति पर विश्वास करने से उदाहरण सब अभी ठीक निकलने लग पड़ेंगे । पर खबरदार गुरु जी के बतायी हुयी गुरु रीति को ही और का और समझ कर मत याद करो ।

प्रतिमा क्या है जिन से मान निकाला जाय मापा जाये, तोला जाये जब तोलने का बट्टा छोटा हो तो तोल का मान बड़ा होता है । जैसे तोलने का बट्टा एक पाव होने पर यदि किसी चीज का मान चार हो तो बट्टा एक छटांक होने पर मान सोलह होगा अब हिन्दू धर्म के यहां प्रतीक और प्रतिमा क्या थे । ईश्वर को तोलने का बट्टा हिन्दू धर्म में अति उच्च सूर्य चन्द्रमा रूपी प्रतीक भी है । इस से उतर कर गुरु ब्राह्मण रूप हैं जो गरुड़ रूप भी अश्वत्थ वृन्दा रूप भी कैलास गंगा रूप भी, और भी प्रतीक रूप भी और ठिगने से गोल मोल वाले पत्थर को भी प्रतिमा प्रतीक रूप स्थापित कर दिया है यह छोटे से छोटा प्रतीक क्या परमेश्वर को तुच्छ बनाने के लिये था । नहीं जी प्रतीक का छोटा करना इस लिये था कि ईश्वर भाव और ब्रह्म दृष्टि समुद्र बह निकले जब उस नन्हे से पत्थर को भी ब्रह्म देखा तो बाकी अखिल पदार्थ और समस्त जगत तो अवश्यमेव ब्रह्म रूप भान हुआ चाहिये । परन्तु जिस ने मूर्ति पूजा इस समझ से की कि यह जरा सा पत्थर ही ब्रह्म है तो वह हो गया पत्थर का कीड़ा ।